'मैला आँचल' और स्वतंत्र भारत की राजनीति

डॉ. बीरेन्द्र कुमार[1]

'मैला आँचल' (1954) के माध्यम से रेणु ने तत्कालीन राजनीतिक स्थिति पर व्यंग्य किया है। आज भी जब जातिवादी, अवसरवादी, सत्ता लोलुप एवं मूल्यहीन राजनैतिक की स्थितियाँ सामने आती हैं, तब 'मैला आँचल' के कुछ अंश मेरे सामने आ जाते हैं। जिसके कारण 'मैला आँचल' और रेणु की प्रासंगिकता आज के समय में मुझे अधिक तर्कसंगत लगने लगती है; इसी का परिणाम है यह शोधपत्र।

फणीश्वर नाथ रेणु के 'मैला आँचल' में व्यक्त राजनैतिक स्थिति का विवेचन–विश्लेषण करने से पहले मैं रेणु जी से संबंधित कुछ तथ्यों, घटनाओं का उल्लेख करूँगा, जिससे उनकी राजनीतिक प्रतिबद्धता एवं सक्रियता को समझा जा सके।

रेणु का जन्म एक किसान परिवार में हुआ था। इनके पिता शिलानाथ मंडल कांग्रेसी थे। राजनीतिक परिवेश से जुड़े होने के कारण रेणु बचपन से ही स्वतंत्रता आंदोलन एवं उससे जुड़े आन्दोलनकारियों से परिचित होते रहे। रेणु के ही शब्दों में ''अपने क्षेत्र की राजनीति का सीधा असर मुझ पर अब तक पड़ता रहा है। ग्राम समाज में संग्रामी सुराजी किसान का बेटा पहले हूँ लेखक बाद में। पार्टी और राजनीति से अलग हुए मुद्दत हुई लेकिन अपने क्षेत्र की साधारण जनता की नजर में मैं अब भी वही हूँ जो पहले था। मेरे जन्म से पूर्व ही 'तिलक स्वराज फंड' वसूलने के दिन से ही इलाके में मेरा परिवार राष्ट्रीय परिवारों में से एक समझा जाता रहा है। यही कारण है कि मेरी राजनीतिक निष्क्रियता के बावजूद मेरे अंचल के लोग मुझे अराजनीतिक व्यक्ति नहीं समझते हैं।''[1]

राजनीतिक विचारधारा की दृष्टि से रेणु बचपन से ही क्रांतिकारी थे और उनकी यह क्रांतिकारिता जीवन के अंत तक बनी रही। 1930–31 ई. में गाँधी जी की गिरफ्तारी के बाद स्कूल में कक्षा बाधित करने के कारण उन्हें 10 बेंत की सजा दी गई। सजा भुगतने के बाद रेणु की प्रतिष्ठा बढ़ गई। गाँधी जी के 'करो या मरो' को रेणु ने शक्ति भर चरितार्थ करने की कोशिश की। पूर्णिया के 'आजाद दस्ता' के सदस्य बने। अहिंसा या हिंसा सब तरह से विदेशी सत्ता को हटाना उनका कार्यक्रम बन गया। जिसके कारण सन् 1941 से 1943 का अधिकांश समय उन्हें जेल में रहना पड़ा। इसी दौरान वे अन्य आन्दोलनकारियों जयप्रकाश नारायण, नरेन्द्र देव, सतीन्द्र नाथ भादुड़ी, बी.जी. सिन्हा आदि के प्रभाव में आए। द्वितीय विश्वयुद्ध के नाम पर धनराशि एकत्र करने के लिए सरकार ने एक क्रिकेट मैच का आयोजन किया जिसे रेणु ने पिकेटिंग कराकर विफल करा दिया।

---

[1] असिस्टेन्ट प्रोफेसर, रामलाल आनन्द कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

रेणु के सक्रिय राजनीतिक जीवन की शुरूआत 1939 से होती है। 'तब से लेकर मृत्यु पर्यन्त की राजनीतिक जीवनयात्रा में अनेक महत्वपूर्ण अध्याय जुड़े। अररिया में एस.डी.ओ. के सामने प्रदर्शन करते हुए रेणु सिमराहा स्टेशन पर गोरे सिपाहियों के निर्मम बूटों के नीचे रौंदे जाने से लेकर अररिया, पूर्णिया, भागलपुर और पटना की जेलयात्रा ने उनकी राजनीतिक जीवनयात्रा को न सिर्फ रोमांचक बनाया बल्कि लोकतंत्र की स्थापना और समाजवादी समाज की रचना में महत्वपूर्ण अध्याय अंकित किए।'[2]

रेणु में स्वाधीनता की चेतना इस प्रकार भरी हुई थी कि उन्होंने न केवल भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में सक्रिय भागेदारी की, बल्कि नेपाली स्वाधीनता आन्दोलन में भी भाग लिया। 1950 में जब नेपाल के राणाशाही सरकार के विरुद्ध हिमालय की तराई में जनता ने आवाज उठाई तो रेणु अपने आप को रोक न सके। मुक्तिवाहिनी सेना में शामिल होने के बाद स्वाधीनता प्राप्ति के लिए पीठ पर राईफल एवं गले में ट्रांसमीटर लादकर तराई के जंगलों में संघर्ष करते रहे। इस सशस्त्र संघर्ष की अवधि में प्राप्त अपने अनुभवों का उल्लेख उन्होंने 'नेपाली क्रांति कथा' नामक रिर्पोताज में किया है।

जयप्रकाश जी की प्रेरणा से वे सोशलिस्ट पार्टी में आए। परन्तु कुछ ही वर्षों में पार्टी की संरचना एवं कार्य पद्धति से वे गहरे असंतोष से भर गए। परिणामतः 1952 में उन्होंने पार्टी की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया। उन्हीं के शब्दों में ''राजनीति ने मुझे बहुत दिया, गाँव–गाँव भटकाया और अपने लोगों को पहचानने का अवसर दिया। लेकिन मुझे अनुभव हुआ कि सत्ता की होड़ में हमारी पार्टी 'बी' टीम है। अपनी पार्टी में भी हमने वही तौर–तरीके देखे, जो कांग्रेस पार्टी में थे। खासतौर से बुद्धिजीवियों के साथ जो सुलूक हो रहा था, उसमें तो यही बात दिखायी दी। लेफ्ट, राईट किसी भी पार्टी में बुद्धिजीवियों को राजनीतिज्ञों के मुकाबले दूसरे दर्जे का नागरिक समझा जाता है।''[3]

रेणु ने मानवीय मूल्यों के पैमाने पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की स्थितियों को परखने की कोशिश करते हुए लिखा है ''यह कैसा स्वप्न भंग है? यह कैसी छलना है? कलाईयों और पैरों में बेड़ियाँ मौजूद हैं। अपने अंग–अंग पर बंधनों को देखकर हम कैसे विश्वास कर लें कि हम स्वतंत्र हैं। विश्वास की बात तो दूर है, कोई ऐसी कल्पना भी नहीं कर सकता है। हमें विश्वास हो गया है, सुराज हुआ है जरूर, लेकिन बिड़लाओं के लिए, टाटाओं के लिए डालमियाओं के लिए, देशी नरेशों और जमींदारों के लिए, भ्रष्टाचारियों के लिए।''[4]

आधी–अधूरी आजादी से रेणु क्षुब्ध थे। अपेक्षित आजादी न मिलने के कारण उनका आक्रोश उनके साहित्य में भी देखने को मिलता है। राजनीतिक गतिविधियों के बीच वे साहित्यिक रचनाएं भी करते रहे। परन्तु उन्होंने स्वीकार किया कि इससे वे दोनों क्षेत्रों में न्याय नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए बात जब राजनीति और साहित्य में से एक को चुनने की आई तो उन्होंने साहित्य का चुनाव किया। साहित्य के चुनाव के बाद भी वे अपने आपको राजनीति से पूर्ण रूप से अलग नहीं कर सके। इसका प्रमाण है उनका सक्रिय राजनीति में पुनः प्रवेश। 1972 के विधानसभा चुनाव में फारबिसगंज से स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में लड़कर पराजित हुए। कालान्तर में 1974 में जयप्रकाश नारायण जी

के नेतृत्व में बिहार में हुई सम्पूर्ण क्रांति का रेणु ने समर्थन किया। रेणु के राजनीतिक सक्रियता के संदर्भ में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का कहना है ''राजनीति उनका व्यवसाय नहीं धर्म था ... लोकतंत्र के लिए, तानाशाही के खिलाफ हर लड़ाई में वह सबसे आगे खड़े होते थे। नेपाल में राजसत्ता की निरंकुशता के खिलाफ लड़ाई में वह वी.पी. कोईराला के साथ थे। भूमिगत रहकर वे पीठ पर आजादी के लिए रेडियो ट्रांसमीटर लादे मुक्ति के योद्धाओं के साथ डोलते रहते थे। भारत में तानाशाही के खिलाफ लड़ाई में वे जयप्रकाश के साथ थे।''[5]

उनकी साहित्यिक रचनाओं में राजनीति का व्यापक एवं यथार्थ चित्रण मिलता है। राजनीति के परिवर्तित स्वरूप का वर्णन उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'मैला आँचल' में दिखाई देता है। जहाँ स्वतंत्रता के पूर्व के काल की समर्पित, निष्ठावान, उद्देश्यपूर्ण राजनीति का वर्णन तथा उसमें हो रहे बदलाव रेणु की राजनीतिक दृष्टि का आधार बनते हैं। स्वाधीनता आन्दोलन के समय राष्ट्रीय राजनीति में हो रही हलचलें, महात्मा गाँधी का आम जनता पर प्रभाव तथा जनता की उनके नेतृत्व में आस्था, कांग्रेस तथा अन्य राजनीतिक दलों द्वारा स्वाधीनता प्राप्ति के लिए किए जाने वाले प्रयास, आन्दोलन में आम जनता की भागेदारी, सामाजिक, सांस्कृतिक मुद्दों को राजनीति के समक्ष लाने के प्रयास, सिद्धांत तथा मूल्यों की राजनीति आदि का रेणु ने स्वाधीनता पूर्व की स्थितियों में वर्णन किया है। वहीं स्वाधीनता पश्चात के अवसरवादी सत्ता की राजनीति, जातिवादी राजनीति, भ्रष्टाचार का राजनीति में प्रवेश, सत्ता लोलुपता, मूल्यहीन राजनीति आदि बड़े राजनीतिक परिवर्तनों का उल्लेख 'मैला आँचल' में मिलता है।

रेणु जी के 'मैला आँचल' में वर्णित राजनीतिक चेतना वास्तव में भारत के परम्परागत ग्रामीण समाज में आधे–अधूरे जागरुकता के उदय और प्रसार की कथा कहती है। उपन्यास में राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र पूर्णिया जिले का 'मेरीगंज' नामक गाँव है। पूरा गाँव राजनीतिक रूप से सक्रिय दिखाई देता है। गाँव में तीन प्रमुख जातियाँ हैं – कायस्थ, राजपूत और यादव। शुरू में बालदेव और बावनदास जैसे कुछेक नेता गाँधीवादी सिद्धान्तों और स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी भूमिका गाँव वालों को बताते हैं। बालदेव खद्धड़ पहनता है। 'जै–हिन्न' बोलता है। दो साल जेहल खटकर आया है। कांग्रेस का कार्यकर्ता है। वह मेरीगंज के लोगों को कांग्रेस का सदस्य बनाता है। उस समय कालीचरन भी कांग्रेस का सदस्य बनता है। कालान्तर में उसे पता चलता है कि कांग्रेस पूँजीपतियों की बुर्जुआ पार्टी है। असली पार्टी तो सोशलिस्ट पार्टी है। कालीचरन गाँव में सोशलिस्ट पार्टी का नेतृत्व करता है। वह कांग्रेस पार्टी एवं उसके नेताओं के वास्तविक चरित्र को उजागर करता है और सोशलिस्ट पार्टी के झंडे तले गाँव के बहुत से लोगों को एकत्र कर लेता है। सोशलिस्ट पार्टी का नेतृत्व गंगा प्रसाद सिंह यादव को मेरीगंज गाँव में इसलिए भेजता है क्योंकि उस गाँव में सबसे अधिक आबादी यादव जाति के लोगों की है। इसके माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जातिवादी राजनीति स्वातंत्र्योत्तर भारत की राजनीतिक व्यवस्था की जड़ में ही समाई हुई है। आज

सभी राजनीतिक पार्टियाँ चुनावी समीकरण अपने पक्ष में करने के लिए प्रत्याशियों की जाति को अनिवार्य योग्यता बना रही हैं। 'मैला आँचल' उपन्यास में भी कम्युनिस्ट पार्टी के जिला मंत्री कालीचरन से मेरीगंज गाँव की जातिगत जानकारी लेते हैं ''अच्छा कामरेड, आपके गाँव में सबसे ज्यादा किस जाति के लोग हैं? ... यादव। 'ठीक हैं भूमिहार? एक घर भी नहीं? गुड। जुलूस में कितने आदमी थे? सब क्या बालदेव से प्रभावित हैं। माने ब्लाइंड फौलोअर यानि आँख मूँदकर विश्वास करने वाले तो नहीं? अंध भक्त तो नहीं।''[6]

इस प्रसंग के माध्यम से रेणु स्वातंत्र्योत्तर भारत के इस राजनीतिक यथार्थ को व्यक्त कर देते हैं कि किस प्रकार चुनावी राजनीति के लिए जातिवाद को प्रश्रय दिया गया। जिस जाति के लोग अधिक होते उसी जाति का व्यक्ति नेता बनने लगा। जाति के आधार पर टिकट बँटवारे से लेकर मंत्री बनाने का फैसला होने लगा।

उपन्यास में बालदेव और और बावनदास दो प्रमुख गाँधीवाद चरित्र हैं। जिनके संदर्भ में डॉ. सुवास कुमार ने लिखा है ''मैला आँचल में गाँधीवादी मत के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दोनों पहलुओं के रूप में बावनदास और बालदेव रख गए हैं। गाँधीवाद जिस अधकचरेपन और ढ़ोंगी रूप में बालदेव जैसे लोगों के व्यक्तित्व में उपस्थित हुआ, रेणु उसकी खिल्ली उड़ाते थकते नहीं। बावनदास के रूप में मानों स्वयं गाँधी की शारीरिक और सैद्धान्तिक हत्या तथा असफलता चित्रित की गई है। गाँधीवाद को रेणु बालदेव के रूप में रूढ़िवादी सिद्धांत साबित कर देते हैं जो धर्म का सहारा लेकर भ्रष्ट और पतित हो जाता है। गाँधीवादी 'निग्रह' किस प्रकार शोषक रूप अख्तियार करता है इसका रूप बालदेव और उसके द्वारा लक्ष्मी से स्थापित किए गए संबंधों से प्रकट होता है। 'अनशन' को गाँव के लोग यूँ ही अंटशंट नहीं कहते।''[7]

एक अन्य गाँधीवादी चरित्र है चुन्नी गुंसाई; जिसके गाँधीवादी बनने के पीछे उपन्यास में एक घटना का उल्लेख है ''वह चन्ननपट्टी में सभा देखने गया था। तैवारी जी ने भाखन दिया और तनुक लाल गीत गाया। सभी रोने लगे। चुन्नीदास के मन का मैल भी आंसुओं की धारा में बह गया। उसी दिन सुराजी में नाम लिखवा लिया। चर्खा–कर्घा, झंडा–तिरंगा और खद्दर को छोड़कर सभी चीजें मिथ्या है। सुदेशी बाना, विदेशी बैकाठ!

अरे देसवा के सब धन–धान विदेसवा में जाए रहे
मँहगी पड़त हर साल कृसक अकुलाप रहे।

दुहाई गाँधीबाबा! गाँधीबाबा अकेले क्या करे। देश के हरेक आदमी का कर्त्तव्य है...![8]

'मैला आँचल' के ये तीनों चरित्र ग्रामीण परिवेश से आते हैं। गाँधीवादी सिद्धांतों की पूरी जानकारी इन्हें नहीं है, फिर भी गाँधीमार्ग को अपने जीवन में अपना लिए हैं। अशिक्षित होने के कारण इनके ऊपर भावनात्मक असर अधिक होता है। इसीलिए बालदेव बात–बात पर 'अनशन' करने की बात करता है। गाँधी जी के अहिंसा सिद्धांत से वह इस तरह प्रभावित है कि कालीचरन द्वारा अन्याय का विरोध भी उसे हिंसक नजर आता है और वह कालीचरन के कृत्य को हिंसावाद कहकर अनशन करता है। वहीं बावनदास गाँधी जी से बेहद

प्रभावित है। वह कहता है ''क्या होगा यह सरीर रखकर चढ़ा दो गाँधी बाबा के चरण में, भारत माता के खातिर।''[9] बावनदास के संदर्भ में सुवास कुमार का कथन है – ''अपनी संपूर्णता में बावनदास गाँधीवाद का प्रतीक है, उसका जीवन भी सत्य संबंधी प्रयोगों का अनवरत सिलसिला है। गाँधी की तरह उसका हासिल सत्य कड़वा और विडम्बनापूर्ण होता है। वह कांग्रेस से जुड़ा होकर भी कांग्रेस में आई भ्रष्ट और अनैतिक तब्दीलियों से जुड़ने के लिए अपने को तैयार नहीं कर पाता। जिला कांग्रेस के स्तर पर वह सत्ता लोलुप, भ्रष्ट कांग्रेसियों के बीच वैसे ही अलग–अलग पड़ जाता है जैसे राष्ट्रीय स्तर पर गाँधी। और इसी क्रम में गाँधी के समान ही सामाजिक न्याय के लिए व्यक्तिगत हठ करते हुए एक कांग्रेसी नेता की हिंसा का नृशंसतापूर्ण शिकार बनता है। यह कांग्रेसियों द्वारा गाँधी और गाँधीवाद दोनों की प्रतीकात्मक मौत है। इस तरह से रेणु बावनदास के रूप में आजादी के पूर्व और पश्चात् की कांग्रेसी राजनीति पर चुभती हुई टिप्पणी करते हैं।''[10]

स्वतंत्रता के पश्चात् कांग्रेस में भ्रष्ट व्यक्तियों के प्रवेश की ओर संकेत करते हुए बावनदास कहता है ''बिलैती कपड़ा के पिकेटिंग के जमाने में चानमल–सागरमल के गोदाम पर पिकेटिंग के दिन क्या हुआ था, सो याद है तुमको बालदेव? चानमन मड़वाड़ी का बेटा सागरमल ने अपने हाथों सभी भोलंटियरों को पीटा था, जेहल में भोलंटियरों को रखने के लिए सरकार को खर्चा दिया था। वही सागरमल आज नरपतनगर थाना कांग्रेस का सभापति है और सुनोगे ... दुलारचंद कापरा को जानते हो न? वही जुआ कंपनी वाला, एक बार बंगाली लड़कियों को भगाकर लाते समय जो जोगवानी में पकड़ा गया था वह कटहा थाना का सिकरेटरी है।''[11] आजादी के बाद बावनदास, बालदेव और चुन्नीदास जैसे गाँधीवादी लोग अपने को उपेक्षित महसूस करने लगते हैं। रेणु ने लिखा है ''लेकिन बालदेव जी क्या करे? चौधरी जी को वह सब दिन गुरु की तरह मानता आ रहा है। कभी किसी काम में तरोटी नहीं होने दिया। इतना नौवन्नियाँ मेम्बर बनाकर दिया। गाँव में चर्खा सेंटर खुलवा दिया। लेकिन जिला कमेटी के मेम्बर तहसीलदार साहब हो गए हैं। बालदेव को कोई खबर नहीं दी गई। कपड़े की मेम्बरी भी नहीं रही। नीमक कानून के समय से जेल जाने का यही बख्सीस मिला है। कालीचरन की पार्टी वाले ठीक कहते हैं – 'कांग्रेस अमीरों की पार्टी है।''[12] उपन्यास में कांग्रेसी मूल्यों के पतन के अन्य उदाहरण भी हैं। पार्टी में धन की ताकत निष्ठा और प्रतिबद्धता पर भारी पड़ती है। बावनदास, दुलारचंद कापरा जैसे कांग्रेसी ब्लैक मार्केटिंग करने वाले व्यक्ति को बेनकाब करना चाहता है, परन्तु सत्ता तंत्र में दुलारचंद कापरा जैसे लोगों का तंत्र इतना मजबूत होता है। जिसके कारण बावनदास असफल होता है और उसे अपनी जान गवानी पड़ती है। उपन्यास में स्वार्थी, अवसरवादी, चोरबाजारी में लिप्त कांग्रेसी, कापरा जैसे लोगों के नैतिक पतन को रेणु ने बेनकाब किया है। महात्मा गाँधी के श्राद्ध के दिन जब बावनदास चोरी के सामान से लदी गाड़ियों को रोकने की कोशिश कर रहा है। उसी समय सत्ता में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले कुछ लोग – ''होटिल–बंगला में सप्लाई इंस्पेक्टर, दुलारचंद कापरा और कलीमुद्दीनपुर के हवलदार टेबल के चारों ओर बैठकर मोरंगिया माल पी रहे

हैं .... सप्लाई इंस्पेक्टर साहब गिलास में चुस्की लगाते हुए मुस्कराते हैं – अरे धत्त! इस मुर्ग–मुसल्लम से गर्मी थोड़ो आएगी् हवलदार साहब! अरे कोई दो टाँगेवाली मुगी.... ।''[13] दुलारचंद कापरा के माध्यम से रेणु ने स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रीय वातावरण में व्याप्त चोरबाजारी और भ्रष्टाचार की विकराल समस्या को व्यक्त किया है। अपने लालच एवं स्वार्थपूर्ति के लिए प्रेम, स्नेह, भाईचारा, अहिंसा आदि मानवतावादी मूल्यों की परवाह न करते हुए राजनीतिज्ञ बावनदास जैसे देशभक्त की हत्या करने से भी नहीं चूकते हैं। दूसरी तरफ गाँधीवादी बालदेव और चुन्नीदास अपने को उपेक्षित महसूस कर सोशलिस्ट पार्टी में जाना चाहते हैं। बालदेव, कालीचरन के कारण सोशलिस्ट में शामिल नहीं होता है परन्तु गाँधीवादी चुन्नीदास जिसने 'सुराजी' में अपना नाम लिखाया था, कांग्रेस पार्टी छोड़कर सोशलिस्ट पार्टी में चला जाता है। चुन्नीदास के इस दल परिवर्तन के पीछे निश्चित रूप से कांग्रेस पार्टी में उसकी उपेक्षा है। साथ ही चुन्नीदास और कालीचरन जैसे लोग कांग्रेस सत्ता चरित्र के स्वभाव को पहचान कर सोशलिस्ट पार्टी को एक विकल्प के रूप में देखने लगे थे जिससे मेरीगंज में समाजवादी शक्तियों का प्रभाव बढ़ने लगा।

रेणु ने इस उपन्यास में भारतीय जनतंत्र के वास्तविक स्वरूप को उजागर किया है कि किस प्रकार स्वातंत्र्योत्तर भारत में सत्ता के पुराने खिलाड़ियों एवं दलालों ने जनतांत्रिक व्यवस्था को कठपुतली सदृश बना दिया। कांग्रेस के अधिकतर नेतृत्वकर्ता उच्चवर्ग, उच्च जाति, जमींदार वर्ग से आते थे। इन प्रभुत्वशाली लोगों ने जनतंत्र पर कब्जा करना प्रारम्भ कर दिया। सत्ता संतुलन कांग्रेस के पक्ष में होने की वजह से सभी अवसरवादी और सत्ता के दलाल कांग्रेस से जुड़ते चले गए। ऐसे लोगों ने रातोंरात खादी का बाना धारण कर अपने को कांग्रेसी घोषित कर लिया। नेतृत्व ने भी वोट की राजनीति के कारण ऐसे लोगों को प्रोत्साहन दिया। तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद जैसे लोग पार्टी में महत्वपूर्ण स्थान हासिल कर लेते हैं, वहीं बावनदास, बालदेव और चुन्नी गोसाई जैसे कार्यकर्ता उपेक्षित रह जाते हैं। डॉ. जोगिन्द्र सिंह वर्मा का कथन है ''फणीश्वर नाथ रेणु ने इस राजनीतिक अवसरवादिता को बड़ी निर्ममतापूर्वक अनावृत्त किया है। चाहे कांग्रेसी हो, चाहे सोशलिस्ट – कम्युनिस्ट अथवा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ सभी के दोगलेपन को उन्होंने बेनकाब किया है। आज राजनीति सत्ता हथियाने का एक परिष्कृत माध्यम बन चुकी है। जिस राजनीति ने देश की स्वतंत्रता के लिए अनेक बलिदान दिए, देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्त किया, उसी राजनीति को आज मुट्ठी भर नेताओं ने अपनी रखैल बना लिया है। स्वतंत्रता के उपरांत राजनीति में धीरे–धीरे ऐसे नेता प्रविष्ट होते गए, जिन्होंने उसे अपनी स्वार्थसिद्धि का एक सशक्त माध्यम बना लिया। राजनीति स्वार्थ, धोखाधड़ी, कृत्रिमता, खुशामद, बेईमानी जैसे भ्रष्ट मूल्यों का समुच्चय बनकर रह गई। राजनीति का क्षेत्र अधिकार लोलुपता, अवसरवादिता तक ही सीमित हो गया।''[14]

सभी राजनीतिक दल किसी न किसी प्रकार से सत्ता हथियाना चाहते हैं। आम जनता की चिन्ता केवल चुनाव नजदीक आने पर की जाती है। जनता को नए–नए सब्जबाग दिखाये जाते हैं। वोट पाने के लिए उन्हें झूठे आश्वासन दिये

जाते हैं। बावनदास कहता है – ''सब पाटी समान है। उस पाटी में भी जितने बड़े लोग हैं, मंतरी बनने के लिए मार कर रहे हैं। सब मेले–मंतरी होना चाहते हैं बालदेव! देश का काम, गरीबों का काम, चाहे मजदूरों का काम जो भी करते हैं एक ही लोभ से।''[15]

रेणु जी ने बिना पक्षपात किए हर पाटी के यथार्थ रूप को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। यही कारण है अवसरवादी सोशलिस्ट भी उनकी पैनी नज़र से नहीं बच सके। सोशलिस्ट पार्टी का सदस्य होने के कारण वे अपने पार्टी के अंदरूनी राजनीति से परिचित थे। 'मैला आँचल' लिखने से पूर्व ही रेणु जी का इस पार्टी से मोहभंग हो गया था जिससे वे यथार्थ अंकन में सक्षम हो सके। सूर्य नारायण चौधरी के अनुसार ''राजनीति में खासकर समाजवादियों की राजनीति में जो गिरावट आती गई उस पर लीपापोती करने के लिए रेणु अपने को समाजवादी पार्टी के साथ अंत तक जोड़े नहीं रख पाए और उन्होंने अपना पूरा समय साहित्य सृजन में लगाना प्रारम्भ कर दिया।''[16] 'मैला आँचल' में सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता कालीचरन का व्यक्तित्व निष्पक्ष एवं जुझारू चरित्र के रूप में उभरकर सामने आया है। कालीचरन गरीबों, मजदूरों का हितैषी है, निर्भय है, न्याय का पक्षधर है, लेकिन वह अपनी पार्टी के ढुलमुल एवं अवसरवादी रवैये का शिकार हो जाता है। गाँव में उभरती हुई वर्ग चेतना तथा संघर्ष के प्रश्न पर कालीचरन पार्टी नेतृत्व से मार्गदर्शन माँगता है, लेकिन वहाँ से कड़ा निर्देश मिलता है कि अभी कुछ नहीं करना है। सेक्रेटरी का कहना है कि ''कामरेड अभी संघर्ष मत छेड़ो। सबसे पहले अभी एक इलाके में, एक एरिया लेकर इसको इसपारमिन करेंगे, तब इसके बाद और इलाके में इसके लिए हुकुम देंगे। सो भी संघर्ष से एक महीना पहले दरखास्त लेना होगा लोगों से, फिर इनकुआएरी, फिर ऐजुकूटी मीटिंग, तब जाकर राय मिलेगी की संघर्ष करना चाहिए की नहीं।''[17] यहाँ कालीचरन रेणु के व्यक्तित्व का वाहक लगता है। कालीचरन की अपने पार्टी से मिली निराशा, टूटन लेखक की निजी राजनीतिक टूटन लगती है।

सोशलिस्ट पार्टी के नेता भी व्यक्ति को धन के आधार पर ही पहचानते हैं सोमाजट, वासुदेव, सुन्दर आदि अपराधियों को पार्टी में शामिल कर उनके चंदे से पार्टी चलाते हैं। इन्हीं लोगों के कारण कालीचरन को झूठे डकैती के मुकदमे में फँसा दिया जाता है। जब कालीचरन पार्टी के बड़े नेताओं को वास्तविक स्थिति से अवगत कराना चाहता तो उसे निराशा मिलती है। इससे कालीचरन के भीतर का कामरेड आहत होता है। कालीचरन का जंगल की ओर प्रयाण और चलित्तर कर्मकार को एक मात्र विकल्प के रूप में देखना, निश्चित रूप से रेणु के उस मनःस्थिति को प्रकट करता है जब वे बुलेट, हिंसा आदि से समस्या का समाधान सोचने लगे थे।

'मैला आँचल' में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, मुस्लिम लीग, कम्युनिस्ट पार्टी का उल्लेख भी कुछ संदर्भों में हुआ है। इन पार्टियों के प्रति भी रेणु की दृष्टि व्यंग्यात्मक है। कमलदाहा का कमरूद्दीन मुस्लिमलीगी है जो सब्जियों को बेचकर जमींदार बन जाता है। उसे मेरीगंज के लिए सरकारी कपड़ा, तेल, चीनी बाँटने का काम मिलता है, तब वह गैरकानूनी ढंग से सरकारी समानों का ब्लैक

मार्केटिंग करने लगता है। शिकायत जब ऊपर पहुँचती है तो धर्म की आड़ लेकर बच जाता है।

'मैला आँचल' में स्वशासन की प्रमुख इकाई पंचायत का भी उल्लेख मिलता है परन्तु पंचायत के अधिकांश फैसले पक्षपातपूर्ण और दुर्भावना से प्रेरित होते हैं। फुलिया–सहदेव प्रकरण, मठ पर नए महंत की नियुक्ति के संदर्भ में पंच के निर्णय निष्पक्ष नहीं कहा जा सकता।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि रेणु ने 'मैला आँचल' में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का उल्लेख, ग्रामीण–शहरी जीवन पर राजनीति का प्रभाव, गाँधीवादी, समाजवादी, क्रांतिकारी पार्टियों के चरित्र परिवर्तन का बखूबी बयान किया है। रेणु इस उपन्यास के माध्यम से स्पष्ट कर देते हैं कि लोकतंत्र की व्यवस्था होने से विकास और न्याय की जो उम्मीद बँधी थी, राजनीतिक कुचक्रों एवं सत्ता के दलालों ने उसे ध्वस्त कर दिया। चुनावी राजनीति के लिए जातिवाद, धनबल आदि को प्रश्रय दिया गया जिससे योग्य व्यक्ति राजनीति की परिधि पर चले गए। ऐसी स्थिति में 'मैला आँचल' के पात्र ममता का राजनीति की तुलना 'डायन' से करना तर्क संगत लगने लगता है।

संदर्भ

1ण रेणु रचनावली भाग–4, सं. भारत यायावर, राजकमल प्र. दिल्ली 1995, पृ. 425.
2. फणीश्वरनाथ रेणु : सृजन और संदर्भ; सं. अशोक कुमार आलोक, आधार प्रकाशन, हरियाणा 1994, पृ. 60.
3. रेणु रचनावली, भाग–3, सं. भारत यायावर, राजकमल प्र. दिल्ली 1995, पृ. 243.
4. वही।
5. फणीश्वरनाथ रेणु अर्थात् मृदंगिए का मर्म;सं. भारत यायावर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 1991, पृ. 14.
6. मैला आँचल, पृ. 94.
7. आंचलिक यथार्थवाद और फणीश्वरनाथ रेणु – सुवास कुमार, साहित्य सहकार, दिल्ली पृ. 37.
8. मैला आँचल, पृ. 128–129.
9. मैला आँचल, पृ. 129.
10. आंचलिक यथार्थवाद और फणीश्वरनाथ रेणु, सुवास कुमार, पृ. 35.
11. मैला आँचल, पृ. 136.
12. मैला आँचल, पृ. 149.
13. मैला आँचल, पृ.
14. फणीश्वरनाथ 'रेणु' का कथा साहित्य : समाजशास्त्रीय विश्लेषण; डॉ. जोगेन्द्र सिंह वर्मा, ऋषभ चरण जैन एवं संतति, दरियागंज, दिल्ली 1986, पृ. 131.
15. मैला आँचल, पृ. 190.
16. फणीश्वरनाथ रेणु, अर्थात् मृंदगिए का मर्म – सं. भारत यायावर, पृ. 18.
17ण मैला आँचल, पृ. 188.